गया वह समझ गया कि इन्होंने मेरी गैर-मौजूदगी में अपनी प्रतिज्ञा तोड़ दी है। 'प्रतिज्ञा' शब्द मस्तिष्क में आते ही उसे अपनी प्रतिज्ञा याद हो आयी जो उसने गुरुदेव के समक्ष ली थी—'माँस-मदिरा सेवन करने वालों का साथ भी नहीं करना।' इस प्रतिज्ञा के याद आते ही उसने इन दोनों को जगाकर तथा सबके आगे पुनः अग्नि लेने का अपना निश्चय स्पष्ट शब्दों में सुना दिया।

यह निर्णय सुनते ही सब-के-सब स्तब्ध रह गये। गुणसुन्दरी और जयसुन्दरी ने बहुत खुशामद की, लेकिन अषाढ़भूति अपने निर्णय पर अटल रहे। तब अन्त में उन दोनों ने कहा—'हमें खूब धन कमाकर दे जाओ, तभी हम तुम्हें दीक्षा की अनुमति देंगी, अन्यथा नहीं।'

अब अषाढ़भूति विवश हो गये। वे एक खेल और दिखाकर खूब धन उपार्जन करके लाने को सहमत हो गये। वे राजा सिंहरथ के पास गये और उनसे कहा 'महाराज! मैं आपको भरत चक्रवर्ती नाटक दिखाना चाहता हूँ।' राजा ने सहर्ष नाटक देखने की स्वीकृति दे दी।

अषाढ़भूति ने सात दिन में नाटक तैयार किया और फिर नगरी के बाहर विशाल मैदान में इसका मंचन किया। राजा सिंहरथ, राज-परिवार तथा हजारों-लाखों नगर-निवासी देखने आये। भरत का अभिनय स्वयं अषाढ़भूति ने किया। भरत का सम्पूर्ण जीवन हू-ब-हू अभिनीत किया। दर्शकगण तन्मय हो गये। लेकिन अषाढ़भूति तो पूरे तौर से ही इसमें तल्लीन हो गये। शीशमहल में भरतजी के कैवल्य ज्ञान के पंचम के क्षणों में तो अषाढ़भूति की भावधारा इतनी ऊर्ध्वमुखी हुई, आत्मचिंतन में इतने तल्लीन हुए कि उन्हें कैवल्य की प्राप्ति हो गई। वह अषाढ़भूति केवली अषाढ़भूति हो गये।

इसके बाद उन्होंने पंचमुष्टि लोच किया, देवताओं द्वारा दिया हुआ मुनि-वेश धारण किया और धर्मदेशना दी। उनकी देशना से प्रभावित होकर पाँच-सौ व्यक्ति प्रतिबुद्ध हो गये। उन्होंने दीक्षा ग्रहण कर ली। उन पाँच सौ मुनियों के साथ वे अपने गुरुदेव की पदवंदना करने पहुँचे। शिष्य को कैवल्य-प्राप्ति से आचार्य धर्मरुचि को हार्दिक प्रसन्नता हुई।

आयु पूर्ण कर अषाढ़भूति मुनि मुक्त हो गए।

इसीलिए कहा गया है कि एक भी नियम का पालन दृढ़तापूर्वक किया जाये तो वह भी मुक्ति का हेतु बन सकता है।

—उपदेश प्रासाद, भाग ४